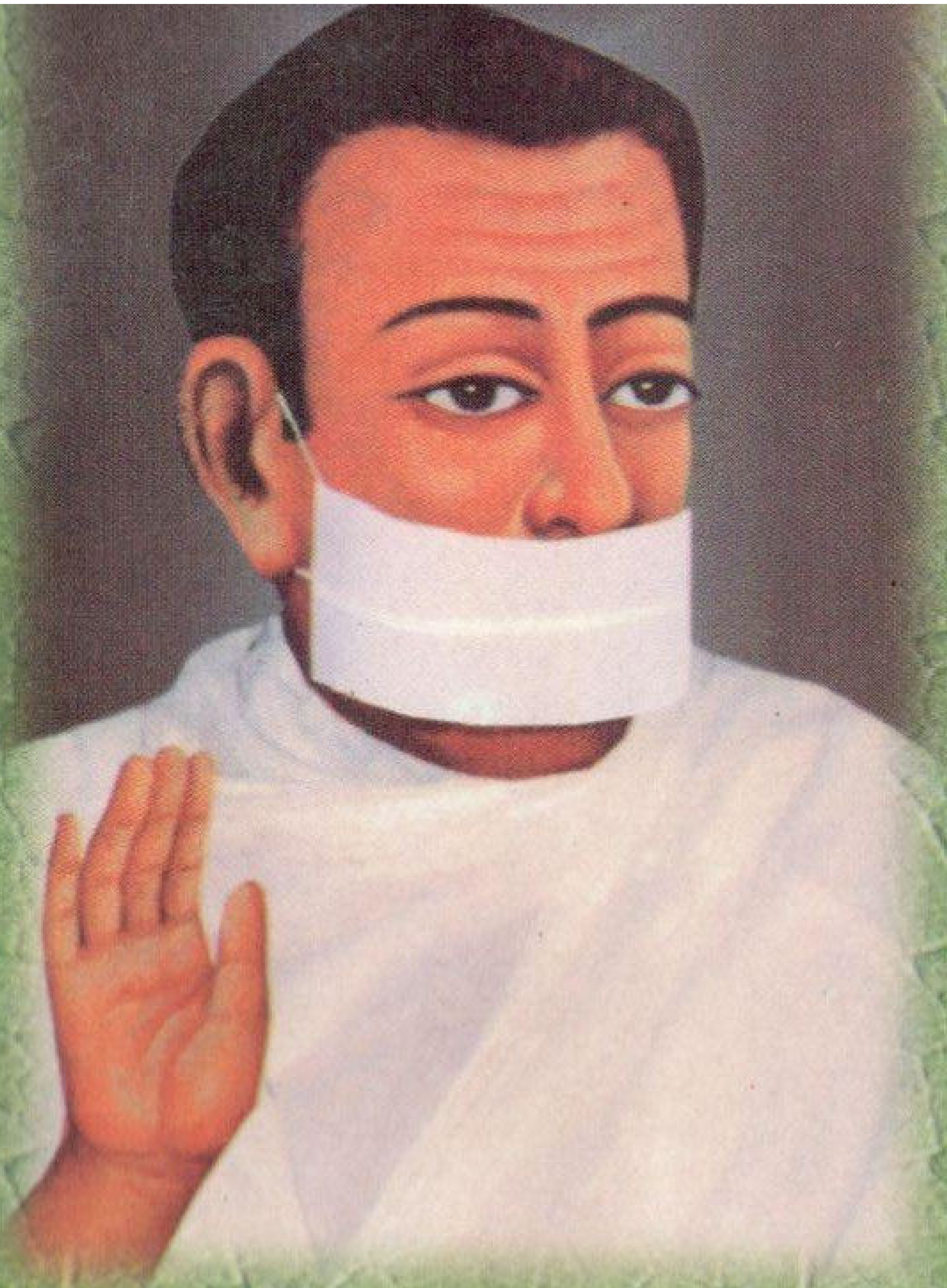

भिक्षु-गीता

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

भिक्षु-गीता

आचार्य महाप्रज्ञ

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

भिक्षु-गीता

जैन विश्व भारती प्रकाशन

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

प्रकाशक :
जैन विश्व भारती
पोस्ट : लाडनूं–341306
जिला : नागौर (राज.)
फोन नं. : (01581) 226080, 224671
ई–मेल : jainvishvabharati@yahoo.com

Books are available online at
http://books.jvbharati.org

© जैन विश्व भारती, लाडनूं

छठा संस्करण : सितम्बर 2017

मूल्य : पचास रुपये मात्र

मुद्रक : श्री वर्धमान प्रेस, दिल्ली, शाहदरा-110032

BHIKSHU GEETA by Acharya Mahapragya **₹ 50/-**

अनुक्रम

1.	आदिवचनम्	6
2.	आदिमंगलम्	8
3.	अनुशासन–संहिता	10
4.	नीतिसूत्रम्	34
5.	आचार्य–कर्त्तव्यम्	48
6.	शिक्षापदम्	64
7.	साधनापदम्	80
8.	कल्याणकारकम्	94

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

आदिवचनम्

आचार्यभिक्षुः यावान् तत्त्ववेत्ता तावानेव मर्यादा-मर्मज्ञः अनुशासनकलादक्षः व्यवस्थाकुशलश्चासीत्। सूक्ष्मदर्शिना श्रीभिक्षुणा मर्यादामधिकृत्य यदुक्तं यदुन्नीतं तत्पुरस्कृत्य लिखितेयं मया भिक्षुगीता। आचार्यवर्याणां श्रीतुलसीगणिनां प्रसादमासाद्य लब्धं साफल्यं मया।

मन्येऽहं अनुशासनप्रियाणां जनानामंतस्तोषाय भविष्यत्यसौ।

युवाचार्यमहाश्रमणस्य सूक्ष्मदृशा पूतोऽयं ग्रंथः सूक्ष्मदृशां भविष्यति मनीषाविवृद्धये।

अस्या अनुवादो विहितोऽस्ति साध्व्या विश्रुतविभया संपादनकार्यमकारि मुनिना धनंजयेन। मुनि राजेन्द्र कुमारेण, साध्व्या सिद्धप्रज्ञया, श्रुतयशसा चास्याः निरीक्षणं कृत्वा रचनायाः वैशद्याय विहितः प्रयत्नः।

मन्येऽहं आचार्यवर्यैः श्री तुलसीगणिभिः विरचितं 'पञ्चसूत्रम्' तेरापंथस्य अनुशासनोन्नयनाय मद्दुपयोगि।

'पञ्चसूत्रम्' 'भिक्षुगीता'—अनयोर्द्वयोः समवायः तेरापंथस्याऽनुशासनं आत्मसात् कर्तुं भविष्यति प्रत्यलः।

31/10/2001 आचार्यः महाप्रज्ञः

बीदासरः

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

आदिवचन

आचार्य भिक्षु जितने तत्त्ववेत्ता थे, उतने ही मर्यादा-मर्मज्ञ, अनुशासन की कला में दक्ष और व्यवस्था-कुशल थे। सूक्ष्मदर्शी आचार्य भिक्षु ने मर्यादा के संदर्भ में जो कहा, जो महत्त्वपूर्ण विकास किया, उसे सामने रखकर मैंने इस 'भिक्षु गीता' का प्रणयन किया। आचार्यश्री तुलसी के प्रसाद को प्राप्त कर मुझे इस कार्य में सफलता मिली।

मैं मानता हूं—यह ग्रंथ अनुशासन-प्रिय व्यक्तियों के अंतस्तोष का हेतु बनेगा।

युवाचार्य महाश्रमण की सूक्ष्म दृष्टि से पावन बना यह ग्रंथ सूक्ष्म दृष्टि वाले व्यक्तियों की मनीषा का संवर्धन करेगा। साध्वी विश्रुतविभा ने इसका अनुवाद किया है। मुनि धनंजय कुमार ने इसके संपादन का कार्य किया है। मुनि राजेन्द्रकुमार, साध्वी सिद्धप्रज्ञा और साध्वी श्रुतयशा ने इसका निरीक्षण कर रचना की विशदता के लिए प्रयत्न किया है।

मैं मानता हूं—आचार्य तुलसी द्वारा विरचित 'पञ्चसूत्रम्' तेरापंथ में अनुशासन के विकास के लिए महान उपयोगी है।

पञ्चसूत्रम् और 'भिक्षु गीता'—इन दोनों का समवाय तेरापंथ के अनुशासन को आत्मसात् करने में समर्थ होगा।

31/10/2001 **आचार्य महाप्रज्ञ**

बीदासर

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

आदिमंगलम्

अनंतज्ञानसम्पन्नं निर्दोषं परमेश्वरम् ।
नमाम्यहं महावीरं संयमाध्वप्रवर्त्तकम् ।।

संयमस्तत्र मर्यादा भिक्षोरनुभवो ध्रुवम् ।
संयमं प्रमुखीकृत्य मर्यादा विहिता वरा ।।

तस्या मूल्यमनल्पं च आत्मसात् भविनां भवेत् ।
तुलसीगणिना दृष्टां भिक्षुगीतां सृजाम्यहम् ।।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

आदि–मंगल

जो अनंतज्ञान से सम्पन्न है, अष्टादश दोष से रहित है, परमेश्वर है, संयम–मार्ग का प्रवर्त्तक है, उस तीर्थंकर महावीर को मैं नमस्कार करता हूं।

आचार्य भिक्षु का यह ध्रुव अनुभव था—जहां संयम है वहीं मर्यादा हो सकती है। इसलिए उन्होंने संयम को प्रमुखता देकर प्रवर मर्यादा का विधान किया।

जीवन में उस (मर्यादा) का मूल्य सर्वाधिक है। यह बात ग्रहणशील व्यक्तियों के आत्मसात् हो सके, इस उद्देश्य को सामने रखकर मैं आचार्य तुलसी द्वारा दृष्ट–निर्दिष्ट भिक्षु–गीता की रचना कर रहा हूं।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

प्रथमः अध्यायः

अनुशासन–संहिता

1. उपादेये स्थिरा बुद्धिः हेयं यो हातुमिच्छति।
संयमो नियमो लब्धः स स्पृशत्यनुशासनम्।।

2. धृतिः सहिष्णुताशक्तिः आत्मविश्वाससंपदा।
यस्मिन्नेते गुणाः संति स स्पृशत्यनुशासनम्।।

एकस्य नेतृत्वस्य व्यवस्था

3. अवीतरागलोकेऽस्मिन् वीतरागप्रकल्पिता।
नेतृत्वस्य व्यवस्थाऽसौ विहिता भिक्षुणा वरा।।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

अध्याय 1

अनुशासन–संहिता

1. [अनुशासन का मूल आधार है विवेक। विवेक का कार्य है स्वीकार करने योग्य वस्तु का स्वीकार और परित्याग करने योग्य वस्तु का परित्याग।]

   जिसकी बुद्धि उपादेय में स्थिर होती है, जो हेय को छोड़ना चाहता है, और जिसे संयम और नियम उपलब्ध हो जाता है, वही व्यक्ति अनुशासन का अनुपालन कर सकता है।

2. जिस व्यक्ति में धृति, सहिष्णुता की शक्ति, आत्मविश्वास की संपदा—इन गुणों का विकास होता है, वही व्यक्ति अनुशासन का अनुपालन कर सकता है।

एक नेतृत्व की व्यवस्था

3. मनुष्य अवीतराग—राग–द्वेष से युक्त है। उसके लिए आचार्य भिक्षु ने नेतृत्व की ऐसी व्यवस्था की, मानो किसी वीतराग के लिए की हो।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

4. आचार्य एक एव स्यात् भव्यं तस्यानुशासनम् ।
विनयप्रवणैरर्हैः मान्यं सर्वैर्मुमुक्षुभिः ।।

मर्यादायाः उद्देश्यम्

5. संविभागः समभावः सौहार्दं च परस्परम् ।
व्यवस्था कलहोन्मुक्तिः मर्यादाऽचारशुद्धये ।।

6. नो हीनो नो विशिष्टोऽस्ति निश्चयप्रतिपादनम् ।
हीनः स्यादतिरिक्तोऽपि व्यवहारनयस्तुतौ ।।

पवित्रं पञ्चामृतम्

7. आत्मोत्सर्गस्तपस्या च सहयोगः परस्परम् ।
वात्सल्यस्य महत्त्वं च सम्यग् ग्रहणशीलता ।।
8. पञ्चामृतमिदं पुण्यं अभिषिक्तो निरन्तरम् ।
संघकल्पतरुर्येन पुष्पितः फलितो भवेत् ।।
(युग्मम्)

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

4. संघ में एक ही आचार्य होगा। पूरे धर्मसंघ में उसी का अनुशासन रहेगा। विनय में कुशल और योग्यता-सम्पन्न सभी मुमुक्षु इस अनुशासन को मान्य करें।

मर्यादा का उद्देश्य

5. आचार्य भिक्षु ने संविभाग, समभाव, परस्पर सौहार्द, व्यवस्था, कलहमुक्ति और आचारशुद्धि के लिए मर्यादा का विधान किया।

6. कोई भी व्यक्ति हीन नहीं है, कोई विशिष्ट नहीं है—यह निश्चय नय का प्रतिपादन है। व्यवहार नय की मर्यादा के अनुसार कोई व्यक्ति हीन भी है और कोई अतिरिक्त भी है।

पवित्र पंचामृत

7-8. आत्मोत्सर्ग, तपस्या, परस्पर सहयोग, वात्सल्य का महत्त्व और सम्यक् ग्रहणशीलता—यह पवित्र पञ्चामृत है। इस पञ्चामृत से अभिषिक्त संघ-कल्पवृक्ष निरन्तर पुष्पित और फलित होता है।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

विषपञ्चकम्

9. भावः पूजाप्रतिष्ठायाः भावना सुविधां श्रिता ।
स्वार्थनिष्ठा मनोवृत्तिः अहंभावस्य पोषणम् ।।

10. देशकालानभिज्ञत्वं विषपञ्चकमुच्यते ।
संघकल्पतरुर्येन सिक्तः सम्मूर्च्छितो भवेत् ।।
(युग्मम्)

अनुशासनस्य स्रोतः

11. किं स्रोतः किं स्वरूपं च किं फलं चानुशासनम् ?
स्वतंत्रता भवेत् स्रोतः परस्वातन्त्र्यरक्षिका ।।

12. इच्छारोधः स्वरूपं स्यात् प्रसादः समता फलम् ।
सुस्थिरो जायते संघः विद्यमानेऽनुशासने ।।

13. आत्मानुशासकः कश्चित् कश्चित् परानुशासकः ।
द्वयानुशासको युक्तः गणसन्ततिवृद्धये ।।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

विष–पंचक

9–10. पूजा और प्रतिष्ठा का भाव, सुविधावादी मनोभाव, स्वार्थनिष्ठ मनोवृत्ति, अहं भाव का पोषण, देश और काल की अनभिज्ञता—यह विष–पञ्चक है। इस विष–पञ्चक का सिञ्चन पाकर संघ कल्पवृक्ष सम्मूर्छित हो जाता है, प्राणशून्य हो जाता है।

अनुशासन का स्रोत

11. अनुशासन का स्रोत क्या है? उसका स्वरूप क्या है? उसका फल क्या है?

    अनुशासन का स्रोत है स्वतन्त्रता, वह स्वतन्त्रता जो दूसरे की स्वतन्त्रता की रक्षा करने वाली है।

12. अनुशासन का स्वरूप है इच्छा का निरोध। उसका फल है प्रसन्नता और समता। जिस संघ में अनुशासन है, वह संघ सुस्थिर हो जाता है।

13. कोई व्यक्ति आत्मानुशासी—स्वयं पर अनुशासन करने वाला होता है। कोई व्यक्ति परानुशासी—दूसरों पर अनुशासन करने वाला होता है। संघ की परम्परा का संवर्धन करने के लिए आत्मानुशासन और परानुशासन दोनों अपेक्षित हैं।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

कः मान्यः

14. कश्चिदर्थकरो भव्यः कश्चिन् मानकरो भवेत्।
कश्चिद् द्वयप्रवृत्तः स्यात् कश्चिद् द्वयपराङ्मुखः।।

15. साधयेद् यो गणस्यार्थं स श्रेयान् सम्मतो भवेत्।
अमानी मन्यते सर्वैः न मतो मानकृद् भवेत्।।

मर्यादा धर्मश्च

16. शस्त्रेण रक्षिते देशे शास्त्रचिंता प्रवर्तते।
मर्यादारक्षिते संघे धर्मोऽध्यात्मं प्रवर्तते।।

17. श्रीमद्भिक्षोर्महाभिक्षोः अनुयायित्वमाश्रिताः।
मर्यादां नैव मन्यन्ते किमाश्चर्यमतः परम्?।।

विधिनिषेधरूपं अनुशासनं

18. अनुशासनसिद्धान्तः सम्मतो हि द्वयात्मकः।
क्वचिद् विधिर्निषेधोऽपि यथायोगमपेक्ष्यते।।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

मान्य कौन ?

14. कोई योग्य व्यक्ति प्रयोजन सिद्ध करने वाला होता है। कोई व्यक्ति अहंकार करने वाला होता है। कोई व्यक्ति प्रयोजन सिद्ध भी करता है और अहंकार भी करता है। कोई व्यक्ति न प्रयोजन सिद्ध करता है और न अहंकार करता है।

15. जो व्यक्ति गण के प्रयोजन को सिद्ध करता है, वह श्रेयस्कर है और सबके द्वारा मान्य होता है। जो अमानी–अहंकाररहित है, वह सबके द्वारा मान्य होता है, अहंकार करने वाला किसी के द्वारा मान्य नहीं होता।

मर्यादा और धर्म

16. शास्त्र की चिंता उसी देश में होती है जो देश शस्त्र द्वारा सुरक्षित होता है। धर्म और अध्यात्म का विकास उसी संघ में होता है जो संघ मर्यादा से सुरक्षित है।

17. महाभिक्षु श्रीमद् भिक्षुस्वामी के अनुयायी होकर मर्यादा को नहीं मानते। इससे अधिक आश्चर्य क्या है?

अनुशासन के दो रूप : विधि और निषेध

18. अनुशासन–सिद्धान्त के दो रूप सर्वसम्मत हैं—विधि और निषेध। जहां विधि की अपेक्षा हो, वहां विधि का,

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

19. कर्तव्यस्य विनिर्देशः परमावश्यको विधिः।
अकृत्यस्य निषेधोऽपि तथैव परमो मतः।।

20. सारणावारणारूपं संभवत्यनुशासनम्।
सारणा प्रेरणा प्रोक्ता वारणा तु निवारणम्।।

अनुशासनहीनतायाः परिणामः

21. अनुशासनहीनस्य संयमो नैव शुद्ध्यति।
अनुभूतमिदं सत्यं संशयो नात्र विद्यते।।

22. अनुशासनहीनस्य विकासो नैव जायते।
अनुभूतमिदं सत्यं संशयो नात्र विद्यते।।

समता समाधिश्च

23. वीतरागा न सन्त्येते साधनायामुपस्थिताः।
रागो द्वेषः प्रमादश्च सरागे संभवंत्यलम्।।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

जहां निषेध की अपेक्षा हो, वहां निषेध का प्रयोग किया जाता है।

19. कर्तव्य का निर्देश परम आवश्यक होता है। वैसे ही अकरणीय का निषेध भी परम आवश्यक होता है।

20. अनुशासन के दो रूप हैं—सारणा और वारणा। सारणा का अर्थ है प्रेरणा। वारणा का अर्थ है निवारण—रोकना।

अनुशासनहीनता का परिणाम

21. जो अनुशासन से रहित है, उस साधक का संयम शुद्ध नहीं होता। यह अनुभूत सत्य है। इसमें कोई संदेह नहीं है।

22. जो अनुशासन से रहित है, वह विकास नहीं कर सकता। यह अनुभूत सत्य है। इसमें कोई संदेह नहीं है।

समता और समाधि

23. साधना में उपस्थित होने वाले सब साधु वीतराग नहीं होते। सराग अवस्था में राग, द्वेष और प्रमाद—इनकी पर्याप्त संभावना रहती है।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

24. पक्षपातोऽपि तज्जन्यः तेन साम्यं विखंडितम् ।
साम्ये विखंडिते सर्वा व्यवस्था शिथिला भवेत् ।।

25. आचार्यभिक्षुणाऽकारि व्यवस्था समतां श्रिता ।
समता सिद्धिमाप्नोति यत्र विश्वास उच्छ्रितः ।।

26. संविभागं श्रिताः सर्वे समाधिमुपयुंजते ।
समता विद्यते यत्र समाधिस्तत्र जायते ।।

व्यक्तिस्वातन्त्र्यम्

27. व्यक्तिस्वातन्त्र्यमेवास्ति विकासस्य परं पदम् ।
तन्निरोधोऽवरोधोऽस्ति प्रगतेरिति प्रत्ययः ।।

मनुष्यस्य स्वभाव :

28. मनुष्यस्य स्वभावोऽयं अहंकारोर्मिरुद्भवेत् ।
कदाचिद् हीनभावोऽपि कदाचिन् मनसो भ्रमः ।।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

24. राग और द्वेष से पक्षपात भी जन्म लेता है, उससे समता विखण्डित हो जाती है। समता के विखण्डित होने पर सारी व्यवस्था शिथिल हो जाती है।

25. आचार्य भिक्षु ने समता प्रधान व्यवस्था का निर्माण किया। जहां विश्वास प्रगाढ़ होता है वहां समता सिद्ध हो जाती है।

26. संविभाग का आश्रय लेने वाले सभी साधु समाधि का उपयोग करते हैं—समाधि की अर्हता अर्जित कर लेते हैं। जहां समता है, वहां समाधि है।

व्यक्ति स्वातंत्र्य

27. व्यक्ति की स्वतन्त्रता ही विकास का सर्वोच्च स्थान है। स्वतन्त्रता को रोकना प्रगति में अवरोध पैदा करना है। यह हमारी निश्चित प्रतीति है।

मनुष्य का स्वभाव

28. मनुष्य का स्वभाव है—कभी उसमें अहंकार की ऊर्मियां आकाश को छूती हैं, कभी हीन भावना की तरंगें पाताल तक पहुंच जाती हैं और कभी मानसिक भ्रम पैदा हो जाता है।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

29. कदाचिद् गौरवं कामं कदाचिद् विक्षिपेद् मतिः।
कदाचिद् भयमौत्सुक्यं सहेतुकमहेतुकम्।।

संस्कारः भावः व्यवहारश्च

30. नानासंस्कारजन्मानः नानाभावा भवन्त्यमी।
अनिरुद्धाः प्रकुर्वन्ति व्यवहारमयन्त्रितम्।।

31. निरुद्धा दमिताश्चापि भवेयुर्हानिहेतवः।
चेतो नाशो मतेर्नाशः नानारोगसमुद्भवः।।

32. तेनात्र मध्यमो मार्गः आचार्येणोपधीयताम्।
येन नोच्छृंखलाः शिष्याः नो वा सामर्थ्यवर्जिताः।।

स्वतन्त्रता अनुशासनञ्च

33. अनुशासनमेवाऽस्ति विकासस्य परं पदम्।
तस्यानुभावरक्षायै रक्षणीया स्वतंत्रता।।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

29. कभी अत्यधिक बड़प्पन की भावना जाग जाती है, कभी मति विक्षिप्त हो जाती है—चंचलता का अतिरेक हो जाता है। कभी भय, कभी उत्सुकता—ये स्थितियां सहेतुक होती हैं और कभी-कभी अहेतुक भी हो जाती हैं।

संस्कार, भाव और व्यवहार

30. मनुष्य में नाना प्रकार के संस्कार हैं इसलिए उनमें पैदा होने वाले भाव भी नाना प्रकार के हैं। यदि निषेधात्मक भावों पर नियन्त्रण न हो तो ये व्यवहार को अनियन्त्रित बना देते हैं।

31. भाव (Emotion) का बलपूर्वक निरोध और दमन करने पर वे हानि के हेतु बन जाते हैं। उससे चित्त-शक्ति का विनाश और मति का विभ्रम हो जाता है तथा नाना प्रकार के रोग उत्पन्न हो जाते हैं।

32. इसलिए मध्यम मार्ग को तप मानकर आचार्य को उसका आलम्बन लेना चाहिए। ऐसा होने पर शिष्य न तो उच्छृंखल होते हैं और न शक्ति से शून्य।

स्वतंत्रता और अनुशासन

33. अनुशासन ही विकास का सर्वोच्च स्थान है। उसके सामर्थ्य की रक्षा के लिए स्वतन्त्रता की रक्षा करनी चाहिए।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

34\. व्यवस्था विहिता तेन मनोभावो निवेद्यताम्।
आचार्याय यथायोग्यमाचार्यमतसाधवे।।

35\. व्यवस्थायां विधिर्मुख्यो व्यक्तिर्नो मुख्यतां भजेत्।
स एव सम्मतो धीमान् यो विधिं शिरसा वहेत्।।

नेतृत्वमनेकान्तश्च

36\. अहंकार आग्रहश्च नेतृदोषौ भयावहौ।
सत्तायामुपलब्धायां अहंकारोऽपि संभवेत्।।

37\. आग्रहोऽपि विचाराणां सर्वेषां प्रकृतिं गतः।
तत्राधिकारसंपन्ने सहजं जायतेऽधिकः।।

38\. आचार्येण समालम्ब्योऽनेकान्तोऽयं हितावहः।
सुखावहो गणस्यास्ति संपदां संप्रदायकः।।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

34. इसलिए आचार्य भिक्षु ने व्यवस्था की—अपने मनोभावों को बलपूर्वक मत रोको। औचित्य के अनुसार आचार्य को निवेदन करो अथवा आचार्य द्वारा सम्मत साधु को निवेदन करो।

35. व्यवस्था में विधि–विधान मुख्य होता है, व्यक्ति मुख्य नहीं होता। वह बुद्धिमान व्यक्ति सबके द्वारा सम्मत, मान्य होता है, जो विधि–विधान को शिरोधार्य करता है।

नेतृत्व और अनेकान्त

36. अहंकार और आग्रह—ये दोनों नेतृत्व के भयावह दोष हैं। सत्ता के उपलब्ध होने पर अहंकार की संभावना भी रहती है।

37. विचारों का आग्रह भी सब मनुष्यों में प्रकृतिगत—स्वाभाविक होता है। जो अधिकार सम्पन्न व्यक्ति होते हैं, उनमें सहज ही आग्रह पनप जाता है।

38. आचार्य को अनेकान्त का आलम्बन लेना चाहिए। वह सबके लिए हितकर है, गण के लिए सुखकर है और संपदा को बढ़ाने वाला है।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

गणस्यात्मा

39. आचार्यो हि गणस्यात्मा तस्येयं त्रिपदी मता।
सम्यगास्था समीचीनो दृष्टिकोणश्च धारणा।।

गणस्य प्राणा :

40. प्राणा गणस्य सन्त्येते सम्यगात्मानुशासनम्।
विनम्रत्वञ्च सौहार्दं वात्सल्यं सम्मतिर्मिथः।।

गणस्य शरीरं

41. शरीरं तस्य सम्मानं व्यवस्था चानुशासनम्।
सारणा वारणा सेवा सहयोगः परस्परम्।।

संघस्य महत्त्वं

42. सरलं जडवस्तूनां एकत्रीकरणं भवेत्।
कठिनं चेतनानान्तु मनुष्याणामिदं मतम्।।

43. उपायद्वयमत्रेदमास्थाऽनुशासनं तथा।
अनेन संभवेत् तेषां संग्रहो वीतविग्रहः।।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

गण की आत्मा

39. आचार्य गण की आत्मा है। उसके लिए यह त्रिपदी सम्मान्य है—समीचीन आस्था, समीचीन दृष्टिकोण और समीचीन धारणा।

गण के प्राण

40. ये विशेषताएं गण की प्राण हैं—सधा हुआ आत्मानुशासन, विनम्रता, सौहार्द, वात्सल्य और परस्पर विचारों में सम्मति, सहमति अथवा ऐकमत्य।

गण का शरीर

41. गण के शरीर की संरचना इन तत्त्वों से हुई है—दूसरों को सम्मान देना, व्यवस्था, अनुशासन, सारणा (विधि), वारणा (निषेध), सेवा और परस्पर सहयोग।

संघ का महत्त्व

42. जड़ वस्तुओं को इकट्ठा करना सरल है। चेतनाशील मनुष्यों को इकट्ठा करना कठिन है। यह सर्वसम्मत है।

43. चेतनाशील मनुष्यों को इकट्ठा करने के दो उपाय हैं, दो साधन हैं—आस्था और अनुशासन। इस उपाय-युगल के द्वारा उनका विग्रह-मुक्त संग्रह करना संभव है।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

44. क्षमताया अभिव्यक्तिः सामुदायिकजीवने ।
तेन संघस्य माहात्म्यं विदितं विदुषामपि ।।

व्यक्तिः संघश्च

45. व्यक्तिः प्रभाविता तेन व्यक्त्या सोऽस्ति प्रभावितः ।
बिन्दुः सिन्धुं समाश्रित्य सिन्धुतां भजतेतराम् ।।

46. परिस्थितेरानुकूल्यं अल्पसत्त्वो जनो भजेत् ।
परिस्थितिं आनुकूल्यं महासत्त्वो नयेज्जनः ।।

अग्रगामिनः अर्हता

47. आचारे निपुणा निष्ठा मर्यादायामपि ध्रुवम् ।
प्रामाणिको व्यवहारः निश्छलो मधुरस्तथा ।।
48. निष्पक्षः समवृत्तिश्च परार्थेऽपि कृतोद्यमः ।
उदारश्च गभीरश्च श्रमसेवापरायणः ।।
49. सहगामिविकासाय जागरूकः कृतश्रमः ।
पटुः प्रशासने तादृग् अग्रगामित्वमर्हति ।।
(त्रिभिर्विशेषकम्)

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

44. सामुदायिक जीवन में क्षमता को अभिव्यक्त होने का अवसर मिलता है। अतएव विद्वान लोग भी संघ का माहात्म्य समझते हैं।

व्यक्ति और संघ

45. व्यक्ति संघ से प्रभावित होता है और संघ व्यक्ति से प्रभावित होता है। बिन्दु सिंधु का आश्रय लेकर सिंधु बन जाता है।

46. अल्प सत्त्व वाला मनुष्य परिस्थिति की अनुकूलता चाहता है। महासत्त्व वाला मनुष्य परिस्थिति को अनुकूल बना लेता है।

अग्रगामी की अर्हता

47–49. जिसकी आचार और मर्यादा में कौशलपूर्ण निष्ठा है, जिसका व्यवहार प्रामाणिक, निश्छल तथा मधुर है, जो तटस्थ है, समवृत्ति वाला है—समान वर्तन वाला व्यवहार करता है, दूसरे के विकास के लिए उद्यम करता है, उदार, गंभीर, श्रमपरायण और सेवापरायण है, अपने सहगामी के विकास के लिए जागरूक और श्रमशील है, प्रशासन में पटु है, वह व्यक्ति अग्रगामी होने के योग्य होता है।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

सहगामिनः गुणाः

50\. आज्ञां पुरस्सरीकृत्य वर्तितव्यं हितैषिणा।
सदानुशासने निष्ठा भवतात् उदितोदिता।।

51\. विनम्रता सहिष्णुत्वं सहयोगस्य भावना।
सामञ्जस्यमपेक्ष्यन्ते गुणास्तु सहगामिनः।।
(युग्मम्)

व्यवस्थायाः आधारभूतानि तत्त्वानि

52\. मानवीयो दृष्टिकोणः सत्संवेदनशीलता।
सहानुभूतिरुत्कृष्टा तथैवागमसम्मतिः।।
53\. औचित्यं सम्मतिर्न्यायः शरीरमनसोर्बलम्।
अमूल्याधारभूतानि व्यवस्थाया भवन्त्यलम्।।
(युग्मम्)

सेवायाः अनिवार्यता

54\. येन सेवाकृता पूर्वं येन नैव कृता क्वचित्।
तथापि गणशिष्यत्वात् सेवां लब्धुं स चार्हति।।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

सहगामी के गुण

50. अपना और संघ का हित चाहने वाला मुनि आज्ञा को सामने रखकर वर्तन करे। अनुशासन में उसकी निष्ठा सदैव उत्तरोत्तर उदयोन्मुख होती रहे।

51. विनम्रता, सहिष्णुता, सहयोग की भावना और सामञ्जस्य—सहगामी के लिये ये गुण अपेक्षित हैं।

व्यवस्था के आधारभूत तत्त्व

52–53. मानवीय दृष्टिकोण, पर्याप्त मात्रा में संवेदनशीलता, उत्कर्ष के बिंदु को छूने वाली सहानुभूति, आगमिक सिद्धान्तों की श्रद्धापूर्ण स्वीकृति, औचित्य, समीचीन मति, न्याय, शरीरबल और मनोबल–व्यवस्था के ये अमूल्य आधारभूत तत्त्व हैं।

सेवा की अनिवार्यता

54. जिसने पहले दूसरे साधुओं/साध्वियों की सेवा की है और जिसने किसी की सेवा नहीं की है, फिर भी गण का सदस्य होने के कारण वह सेवा लेने का अधिकारी है।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

55. रुग्णावस्था भवेत् कर्हि वृद्धावस्था निसर्गजा।
सेवाऽनिवार्यतामेति सामान्यस्थितिरंकिता।।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

55. किसी समय कोई साधु/साध्वी रुग्ण हो जाती है, कोई अवस्था से वृद्ध हो जाती है, यह नैसर्गिक बात है। हर स्थिति में सेवा की अनिवार्यता है। यह सामान्य स्थिति का अंकन है।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

द्वितीय : अध्याय

नीतिसूत्रम्

कः प्रियः

1. पारस्परिकसौहार्दसीमां यो नातिगच्छति ।
स्थितात्मा स्थितधीर्भिक्षुः स मद्भक्तः स मे प्रियः ।।

2. नापकर्षकथां कुर्यात् कस्यचित् सहगामिनः ।
दर्शयत्यपरोत्कर्षं स मद्भक्तः स मे प्रियः ।।

गणवृद्धिहेतवः

3. यत्र वृद्धास्तु पूज्यन्ते सेव्यन्ते सादरं सदा ।
चेतःसमाधिं नीयन्ते स गणो महतो महान् ।।

4. ममता हीयते यत्र समता च प्रवर्धते ।
स संघः स्वगतैः प्राणैः वर्धते संप्रवर्धते ।।

5. आवेशो हीयते यत्र शमश्शान्तिः प्रवर्धते ।
स संघः स्वगतैः प्राणैः वर्धते संप्रवर्धते ।।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

अध्याय 2

नीति–सूत्र

प्रिय कौन ?

1. जो भिक्षु पारस्परिक सौहार्द की सीमा का अतिक्रमण नहीं करता, स्थितात्मा है, स्थितप्रज्ञ है, वह मेरा भक्त है, वह मुझे प्रिय है।

2. जो मुनि अपने किसी भी सहगामी के अपकर्ष की बात नहीं करता और दूसरे के उत्कर्ष को जनता के सामने लाता है, वह मेरा भक्त है, वह मुझे प्रिय है।

गणवृद्धि के हेतु

3. जिस गण में वृद्ध व्यक्तियों की सदैव पूजा की जाती है, आदरपूर्वक सदा उनकी सेवा की जाती है, जहां उन्हें चित्तसमाधि प्राप्त होती है, वह गण महान् से महान् होता है।

4. जिस गण में मेरापन कम होता जाता है और समता बढ़ती जाती है, वह गण अपनी ही प्राणशक्ति से वर्धमान होता है, प्रवर्धमान होता है।

5. जिस गण में आवेश कम होता जाता है, उपशम और शान्ति बढ़ती जाती है, वह गण अपनी ही प्राणशक्ति से वर्धमान होता है, प्रवर्धमान होता है।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

6. आलस्यं हीयते यत्र श्रमः शश्वत् प्रवर्धते ।
स संघः स्वगतैः प्राणैः वर्धते संप्रवर्धते ।।

7. इन्द्रियावशता हीना वशीकारः प्रवर्धते ।
स संघः स्वगतैः प्राणैः वर्धते संप्रवर्धते ।।

8. प्रद्वेषो हीयते यत्र सौहार्दं च प्रवर्धते ।
स संघः स्वगतैः प्राणैः वर्धते संप्रवर्धते ।।

9. मूर्च्छा प्रहीयते यत्र विवेकश्च प्रवर्धते ।
स संघः स्वगतै प्राणैः वर्धते संप्रवर्धते ।।

10. शताब्दीष्वपि भुक्तासु यस्य प्राणाः प्रतिष्ठिताः ।
स संघः स्वगतैः प्राणैः वर्धते संप्रवर्धते ।।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

6. जिस गण में आलस्य कम होता जाता है और श्रमशीलता निरंतर बढ़ती जाती है, वह गण अपनी ही प्राणशक्ति से वर्धमान होता है, प्रवर्धमान होता है।

7. मनुष्य का व्यवहार इन्द्रियों के अधीन है। जिस गण में इन्द्रियों की पराधीनता कम होती जाती है, वशीकार बढ़ता जाता है, इन्द्रियों पर नियन्त्रण करने की शक्ति बढ़ती जाती है, वह गण अपनी ही प्राणशक्ति से वर्धमान होता है, प्रवर्धमान होता है।

8. जिस गण में प्रद्वेष क्षीण होता जाता है और सौहार्द बढ़ता जाता है, वह गण अपनी ही प्राणशक्ति से वर्धमान होता है, प्रवर्धमान होता है।

9. जिस गण में मूर्च्छा हीन होती जाती है और विवेक बढ़ता जाता है, वह गण अपनी ही प्राणशक्ति से वर्धमान होता है, प्रवर्धमान होता है।

10. शताब्दियों के बीत जाने पर भी जिस गण के प्राण प्रतिष्ठित हैं, वह गण अपनी ही प्राणशक्ति से वर्धमान होता है, प्रवर्धमान होता है।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

सुदर्शनचक्रं

11. अनुशासनं व्यवस्था विनम्रता सहिष्णुता ।
अहंकार–ममकार–युगलस्य विसर्जनम् ।।

12. अपेक्ष्यन्ते शक्तिमन्तः समस्याचक्रछित्तये ।
शक्तयोप्यधिगम्यन्ते सद्विचारैः सुदर्शनैः ।।

13. विचारो यत्र साकारः दर्शनं च निदर्शनम् ।
आकर्षति यदाचारः विचारं दर्शनं प्रति ।।
(त्रिभिर्विशेषकम्)

महत्त्वं विनीतस्य

14. प्रभावमर्जयित्वा यः साधुः साध्वी तथाविधः ।
अन्येषां गणनिष्ठानां समाधिं न्यूनतां नयेत् ।।

15. तस्य तस्याः प्रभावो वा वर्धनीयो न शासने ।
अन्यथा साधु–साध्वीनां भयवृद्धिः प्रजायते ।।

16. तेन संघस्य निष्ठायां आशंका जायते ध्रुवम् ।
सर्वे स्वस्वाधिकारेषु वर्तेरन् मंगलं ततः ।।
(त्रिभिर्विशेषकम्)

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

सुदर्शन चक्र

11–12–13. अनुशासन, व्यवस्था, विनम्रता, सहिष्णुता, अहंकार और ममकार के युगल का विसर्जन—ये शक्तिशाली गुण समस्या के चक्र का छेदन करने के लिए अपेक्षित हैं। सुदर्शन* चक्र समस्या के चक्र का छेदन कर सकता है। सुदर्शन (सम्यक् दर्शन युक्त) विचारों से शक्तियां अधिगत होती हैं।

जहां विचार साकार होता है, क्रियान्वित होता है, जहां दर्शन निदर्शन बन जाता है, जहां आचार विचार को दर्शन की ओर आकृष्ट करता है, वहां शक्तियां अधिगत होती हैं।

विनीत का महत्त्व

14–15–16. जो महत्त्वाकांक्षी साधु–साध्वी अपने प्रभाव को बढ़ाकर दूसरे संघनिष्ठ साधु–साध्वियों की समाधि में बाधा डालता है, आचार्य को चाहिए कि गण में वैसे साधु अथवा साध्वी का प्रभाव न बढ़ाए। यदि आचार्य ऐसा नहीं करता है तो गण के साधु–साध्वियों में भय की वृद्धि हो जाती है। वैसे साधु–साध्वी का

---

*सुदर्शन के दो अर्थ हैं—

1. सम्यक् दर्शन
2. श्रीकृष्ण वासुदेव का चक्र

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

17. कर्त्तव्यमिदमार्यस्य विनीतो वृद्धिमाप्नुयात्।
आचार्ये च गणे यस्य समर्पणमनुत्तरम्।।

18. वृद्धिं नीतोऽविनीतस्तु समस्यां जनयत्यलम्।
तेन वर्धापनं नूनं स्याद् योग्यस्य हितावहम्।।

19. आचार्ये प्रतनुर्निष्ठा गणेऽपि च तथाविधा।
दृढा व्यक्तिविशेषे स्यात् स नो सम्मानमर्हति।।

20. विनम्रताया माहात्म्यं भिक्षुणा प्रमुखीकृतम्।
तेनानुशासनं तस्य गणे पुष्टमिति ध्रुवम्।।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

प्रभाव बढ़ने पर निश्चित ही संघीय निष्ठा में आशङ्का, संशय अथवा भ्रान्ति पैदा हो जाती है। इसलिए सब अपने–अपने अधिकार में रहें, इसी में सबका मंगल है, कल्याण है।

17. जिस मुनि का आचार्य और गण के प्रति अनुत्तर समर्पण होता है, उस विनीत मुनि का महत्त्व बढ़े, ऐसे वातावरण का निर्माण करना आचार्य का कर्तव्य है।

18. यदि अविनीत साधु को महत्त्व दिया जाता है तो वह समस्या को जन्म देता है। इसलिए योग्य साधु को आगे बढ़ाना ही संघ के लिए हितकर है।

19. जिस मुनि की आचार्य और गण के प्रति निष्ठा कमजोर है और व्यक्तिविशेष के प्रति निष्ठा दृढ़ है, वह साधु सम्मान के योग्य नहीं होता, उसे आगे बढ़ाना संघ के हित में नहीं है।

20. आचार्य भिक्षु ने विनम्रता के महत्त्व को मुख्यता दी, उससे उनके गण में अनुशासन पुष्ट बना, यह निश्चित कहा जा सकता है।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

परिवर्तनस्य हेतु

21. नैवं बलप्रयोगेण जायते परिवर्तनम्।
हृदयस्य परिवर्तेन स्वभावः परिवर्तते।।

22. सत्संस्कारस्य निर्माणं कठिनं विद्यते ध्रुवम्।
दीर्घकालिकशिक्षाभिः प्रशिक्षाभिः प्रजायते।।

दलबंधस्य प्रतिकारः

23. दलबंधे प्रवृत्तानां प्रतिकारो द्रुतं भवेत्।
तेषामुपेक्षया नूनं हानिः संघे सुनिश्चितम्।।

संशयस्य समाधान-पथः

24. आचारे सूत्र-सिद्धान्ते संशयः समुपस्थितः।
उत्पन्नं चिन्तनं नव्यं प्रष्टव्योऽस्ति बहुश्रुतः।।

25. उत्तरेण समाधानं तद्वरं यदि नो भवेत्।
नाग्रहस्तत्र कर्त्तव्यः बुद्धेः शक्तिर्न सर्वगा।।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

परिवर्तन का हेतु

21. बल-प्रयोग से परिवर्तन नहीं होता। स्वभाव के परिवर्तन का मुख्य साधन है हृदय-परिवर्तन।

22. अच्छे संस्कारों का निर्माण निश्चित ही कठिन है। किन्तु दीर्घकालीन शिक्षण और प्रशिक्षण से अच्छे संस्कारों का निर्माण किया जा सकता है।

दलबंदी का प्रतिकार

23. गुटबन्दी करनेवालों का शीघ्र ही प्रतिकार होना चाहिए। उनकी उपेक्षा करने से संघ में निश्चित ही हानि होती है।

संशय का समाधान-पथ

24. आचार, सूत्र और सिद्धान्त के विषय में यदि संशय उपस्थित हो जाए तथा कोई नया चिंतन स्फुरित हो तो उस स्थिति में अपनी जिज्ञासा बहुश्रुत के सामने प्रस्तुत करनी चाहिए और उसका समाधान भी उससे लेना चाहिए। यह आचार्य भिक्षु का प्रवर अनुशासन है, इससे संगठन सुदृढ़ बनता है।

25. बहुश्रुत के उत्तर से समाधान हो जाए, यह श्रेष्ठ है। बहुश्रुत के उत्तर से यदि जिज्ञासा का समाधान न हो तो अनुशासन के महत्त्व को समझने वाला मुनि वहां

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

26. इदं केवलिना गम्यं नास्माभिः स्वल्पचेतनैः ।
इत्युक्त्वा विरमेत्तस्मात् श्रेयो मार्गोऽयमुत्तमः ।।

दोषशुद्धेः प्रक्रिया

27. साधौ साध्व्यां परः कश्चित् दोषं पश्येत् कदाचन ।
स एव खलु वक्तव्यः नान्यस्मै कथयेत् क्वचित् ।।

28. अनल्पो यदि दोषः स्यात् गुरवे विनिवेदयेत् ।
अन्यस्मै प्रवदन्नूनं दोषभागी स्वयं भवेत् ।।

29. प्रतीतिस्तस्य नो कार्या श्रद्धेयो नाम नो भवेत् ।
तस्मिन् नैवास्ति गांभीर्यं दृष्टिश्चापि न शुद्धिकृत् ।।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

आग्रह न करे। वह चिन्तन करे—बुद्धि की शक्ति की सीमा है, वह सर्वव्यापी नहीं है। उससे आगे बहुत विशाल अतीन्द्रिय ज्ञान है।

26. जिज्ञासा करने वाला मुनि यह चिन्तन करे कि मेरा ज्ञान स्वल्प है। इसलिए मुझे आग्रह नहीं करना चाहिए। जो बुद्धिगम्य न हो उसे केवलीगम्य कर विराम ले लेना चाहिए। यह विवाद को समाप्त करने का आचार्य भिक्षु द्वारा प्रदर्शित उत्तम मार्ग है।

दोष शुद्धि की प्रक्रिया

27. किसी साधु में अथवा साध्वी में कोई कमी, कोई दोष देखे तो उसी को जता दे, सावधान कर दे। किसी दूसरे के सामने उसकी चर्चा न करे।

28. यदि बड़ा दोष हो तो दोष करने वाले को जताए और गुरु को भी उसका निवेदन करे। यदि वह दोष के बारे में किसी अन्य को, तीसरे को बताता है तो वह स्वयं दोष का भागी हो जाता है।

29. जो व्यक्ति दोष का प्रचार करे, उसका विश्वास नहीं करना चाहिए। वह कभी श्रद्धेय नहीं होता। उसमें गंभीरता नहीं है और उसका दृष्टिकोण भी दोष की शुद्धि का नहीं है।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

30. दोषं दृष्ट्वा न तत्कालं गुरवे विनिवेदयेत्।
व्यतीते बहुले काले निवेदयति स दोषभाक्।।

31. प्रीतावाच्छादयेद् दोषान् प्रीतिभंगे प्रकाशयेत्।
प्रत्ययं तस्य कः कुर्यात् शुद्धौ निष्ठां न यो भजेत्।।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

30. आचार्य भिक्षु ने दोष–शुद्धि के लिए पथदर्शन दिया——किसी में दोष देखें तो तत्काल, उचित समय देखकर गुरु को निवेदन कर देना चाहिए। जो तत्काल गुरु को निवेदन नहीं करता, बहुत समय बीत जाने पर गुरु को उसका निवेदन करता है, वह स्वयं दोष का भागी है। इसका तात्पर्य है——जिसका दोष बताया जा रहा है वह प्रतिपक्ष का तर्क उपस्थित कर सकता है——जब दोष किया तब क्यों नहीं बताया? अब लम्बे समय के बाद क्यों बता रहा है? इससे लगता है दोष बताने वाले की नीति शुद्ध नहीं है।

31. जो व्यक्ति प्रीति के क्षण में दोषों को ढांक देता है, प्रीतिभंग होने पर उन्हें प्रकट करता है, उसकी बात पर कौन विश्वास करे ? जिसकी निष्ठा दोष की शुद्धि करने में नहीं है, उस पर विश्वास कैसे किया जा सकता है ?

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

तृतीयः अध्यायः

आचार्य-कर्त्तव्यम्

1. उपासीनो गुरोः पादौ यदाहमभवं मुदा।
तदा प्रसंगतो वार्ता प्रारब्धा गुरुणा स्वयम्।।

आचार्यस्य प्रमुखं कार्यम्

2. मुख्यं परम्परारक्षा मुख्यं संघहितं मम।
गौणमन्यद् भवेत् सर्वं संघस्य पुरतो मम।।

3. प्रियतायास्तारतम्यं भवेदपि निसर्गतः।
प्रश्नोऽस्ति यत्र संघस्य तत्र न स्तः प्रियाप्रियौ।।

4. एतदेवास्ति कर्त्तव्यमाचार्यस्य सनातनम्।
एतदेवानुसर्तव्यं संघशक्तिसमृद्धये।।

उत्त्रऋणतायाः अनुभवः

5. गम्भीरं गुरुणा प्रोक्तं चित्ते चिन्तनमस्फुरत्।
यदा कदा बहून् वारान् दायित्वानुभवक्षणान्।।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

अध्याय 3

आचार्य–कर्तव्य

1. जब मैं प्रसन्नता से गुरुदेव (आचार्य तुलसी) के चरणों की उपासना कर रहा था, तब प्रसंगवश स्वयं गुरुदेव ने बातचीत प्रारम्भ की।

आचार्य का मुख्य कार्य

2. मेरे सामने दो कार्य मुख्य हैं—1. परम्परा की रक्षा 2. संघहित। संघ के सामने अन्य सब बातें मेरे लिए गौण हैं।

3. प्रियता का तारतम्य होना स्वाभाविक है, किन्तु जहां संघ का प्रश्न है, वहां मेरे सामने प्रिय और अप्रिय की बात गौण है।

4. आचार्य का यही शाश्वत कर्तव्य है। संघ की शक्ति बढ़ाने के लिए इसी का अनुसरण करना चाहिए।

उऋणता का अनुभव

5–6. गुरुदेव ने गंभीर स्वर में कहा—दायित्व के अनुभव के क्षणों में जब–कभी और बार–बार चित्त में यह चिन्तन स्फुरित होता था—

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

6. क्वचित् कथंचनाप्येतत् न स्यान् न स्यादिति ध्रुवम् ।
अनारोप्ये संघभारः भवेदारोपितो महान् ।।
(युग्मम्)

7. प्रमादः कोऽपि चेद् भूयात् नूनं कालुगणी तदा ।
न निग्रहमकृत्वा मां, मोक्ष्यतेऽनुभवाम्यहम् ।।

8. किन्त्वहं सफलो जातः, प्रसीदामि मुहुर्मुहुः ।
इदानीं चिन्तया मुक्तः, कालुं प्रत्युर्ऋणोस्म्यहम् ।।

9. एतत् शिक्षापदं पुण्यं, लब्धं सहजभावतः ।
भाविनां संघनेतॄणां, सर्वेषां हितकारकम् ।।[1]

सहिष्णुतायाः महत्त्वम्

10. सान्निध्यं भजमानेन, श्रुतः स्वानुभवो मया ।
आचार्याणामुपादेयः, संघस्य श्रेयसे क्षमः ।।

---

1. वि.सं. 2036 आश्विन शुक्ला नवमी । कमलफूल व्यावसायिक संस्थान, लुधियाना में उपरोक्त वार्तालाप सायंकालीन प्रतिक्रमण के बाद हुआ ।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

जिस व्यक्ति के कंधों पर संघ का महान् भार नहीं डालना चाहिए, वह महान् भार उस पर डाल दूं, यह प्रसंग कहीं भी और किसी प्रकार से भी घटित नहीं होना चाहिए, नहीं होना चाहिए। इस विषय में अटल रहना मेरा पवित्र कर्तव्य है।

7. यदि इस विषय में मेरा कोई प्रमाद हो जाए तो निश्चित ही कालूगणी मेरा निग्रह किये बिना मुझे नहीं छोड़ेंगे, ऐसा मैं अनुभव कर रहा हूं।

8. किन्तु मैं अपने लक्ष्य में सफल हो गया। मैं बार–बार प्रसन्नता का अनुभव कर रहा हूं। अब मैं चिन्ता से मुक्त हूं। मैं विश्वास के साथ कह सकता हूं—मैं कालूगणी के ऋण से उऋण हो गया हूं।

9. यह पवित्र शिक्षापद मुझे सहज भाव से प्राप्त हुआ है। भविष्य में होने वाले सभी आचार्यों के लिए यह हित सम्पादन करने वाला है।

सहिष्णुता का महत्त्व

10. एक दिन मैं गुरुदेव की सन्निधि में बैठा था। मैंने उपासना काल में गुरुदेव का एक अनुभव सुना। वह अनुभव आचार्यों के लिए उपादेय है और संघ के कल्याण के लिए सक्षम है।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

11. संप्रोक्तं गुरुणा साक्षात् चिन्तितं च मया चिरम् ।
तेरापंथगणी कर्त्तुं समर्थोऽस्ति यथेच्छति ।।

12. आचार्यमनुवर्तन्ते साधवः श्रावकास्तथा ।
विरोधं कोऽपि नो कुर्यात् आचार्यः प्रकरोति यत् ।।

13. भ्रान्तिरेषा ममोच्छिन्ना कार्यजाते समागते ।
विरोधश्च मनोद्वैधं पुरतो मे व्यवस्थितम् ।।

14. सोढा साक्षादवज्ञापि कृता भिन्नविचारणा ।
प्रगत्यामवरोधोऽपि सोढः संघहितेच्छया ।।

15. आचार्येण हि सोढव्यं क्षान्तिः संघसमृद्धये ।
आचार्यस्य सहिष्णुत्वं चिरायुष्कं गणं सृजेत् ।।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

11. तब गुरुदेव ने मेरे सामने कहा—मैंने लम्बे समय तक चिन्तन किया कि तेरापंथ का आचार्य जैसा चाहे, वैसा करने में समर्थ है।

12. सभी साधु तथा श्रावक आचार्य का अनुगमन करते हैं, उनकी दृष्टि की आराधना करते हैं। आचार्य जो विशेष काम करता है, कोई भी उसका विरोध नहीं करता।

13. जब कुछ व्यवस्थाओं में मैंने परिवर्तन शुरू किया, तब विरोध का वातावरण और मानसिक द्वैध मेरे सामने आ गया। मेरी वह भ्रान्ति उच्छिन्न हो गयी।

14. मैंने साक्षात् अवमानना को सहन किया। अपने विचार से भिन्न विचार को भी स्थान दिया। प्रगति में अवरोध भी आए। यह सब मैंने संघहित की भावना से सहन किया।

15. संघ की समृद्धि के लिए क्षान्ति–सहनशीलता का महत्त्वपूर्ण स्थान है। सहन करना आचार्य के लिए आवश्यक है। आचार्य की सहिष्णुता गण को चिरायु बनाती है।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

सहिष्णुतायाः सीमा

16. शिष्याः प्रोत्साहनं नेयाः कार्यं वर्धापनं वरम्।
आचार्यस्य सहिष्णुत्वमिदं संवर्धयेद् गणम्।।

17. साधुत्वे संघसीमायां विघ्नो यावद् भवेन्नहि।
तावत् सहिष्णुताऽऽदेया नादेयास्ति ततः परम्।।

योगक्षेमचिन्ता

18. आचार्यकेन्द्रिता सर्वा व्यवस्था भैक्षवे गणे।
एक एव भवेच्छास्ता सर्वे शिष्यास्तदाश्रिताः।।

19. आचार्य एव सर्वेषां योगक्षेमवहो भवेत्।
तेन सर्वहितायास्तु चिन्ता तस्य महात्मनः।।

20. तावन्नियंत्रणं युक्तं यावती त्वरिता गतिः।
नियन्त्रणे श्लथे जाते नूनं दुर्घटना भवेत्।।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

सहिष्णुता की सीमा

16. शिष्यों को प्रोत्साहन देना, उनका समुचित वर्धापन करना और आचार्य की सहिष्णुता—ये सब गण की वृद्धि करने वाले हैं।

17. आचार्य के लिए सहिष्णुता का सीमा-बोध अपेक्षित है। कोई व्यक्ति साधु-जीवन की साधना और संघ की मर्यादा के अनुपालन में कोई विघ्न पैदा न करे तो आचार्य उसके अप्रिय व्यवहार को सहन कर ले। इस सीमा में सहिष्णुता आदेय है। यदि वह साधु-जीवन की चर्या और संघमर्यादा के अनुपालन में शिथिलता बरते, वहां सहिष्णुता आदेय नहीं है।

योगक्षेम की चिन्ता

18. भैक्षव गण में सारी व्यवस्था आचार्य केंद्रित है। शास्ता एक ही होता है। सारे शिष्य आचार्य के आश्रित रहते हैं।

19. आचार्य सबके योगक्षेम का वहन करता है। इसलिए उस महान् आत्मा के धनी आचार्य का चिन्तन सबके हित के लिए होना चाहिए।

20. जितनी गति तेज हो, उसके अनुरूप नियन्त्रण होना अपेक्षित है। अपेक्षित नियन्त्रण की शिथिलता होने पर दुर्घटना का होना निश्चित है।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

श्रुतपरंपरायाः सातत्यम्

21. पूर्वं विज्ञातमस्माकं आसीत् स्वात्मनियंत्रणम्।
इदानीमात्मनीहास्ति विज्ञानस्य नियन्त्रणम्।।

22. अविच्छिन्ना चिरं भूयात् श्रुतज्ञानपरंपरा।
आचार्यस्येति दायित्वं तथा चिंता तथा कृतिः।।

23. श्रुतेन जायते नूनं व्युद्ग्रहस्य विमोचनम्।
ज्ञानं यथार्थभावानां तेनाध्ययनमाश्रितम्।।

अधिकारस्य सीमा

24. सर्वसाधारणं काममधिकारस्य भावना।
अधिकारस्य संघर्षः सर्वत्र परिवर्तते।।

25. वर्तितव्यं स्वाधिकारे स्वात्मानं परिपश्यता।
संदेशोऽयमहिंसायाः ध्रुवो नित्यश्च वर्तते।।

26. अहिंसापथमालम्ब्य ध्यातव्यं तं मुहुर्मुहुः।
अधिकारस्य भावोऽयमहिंसामतिगच्छति।।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

श्रुत परंपरा की निरंतरता

21. यह हमें विज्ञात है कि पहले मनुष्य पर आत्मा का नियन्त्रण था। इस समय आत्मा पर विज्ञान का नियन्त्रण है।

22. आचार्य का यह दायित्व है कि श्रुतज्ञान की परम्परा चिरकाल तक अविच्छिन्न रहे। उस विषय में वैसा ही चिन्तन चले और वैसी ही कार्य–योजना बने।

23. श्रुत के द्वारा निश्चित ही कलह का विमोचन होता है, यथार्थ भावों का ज्ञान होता है, इसलिए अध्ययन का आश्रय लिया गया है।

अधिकार की सीमा

24. सब लोगों में अधिकार की भावना प्रबल होती है। अधिकार का संघर्ष सब जगह चल रहा है।

25. अपनी आत्मा को देखने वाले मुनि को सारा व्यवहार अपने अधिकार की सीमा में रखना चाहिए। यह अहिंसा का ध्रुव और शाश्वत संदेश है।

26. अहिंसा के पथ का आलम्बन लेने वाले मुनि को इसका बार–बार चिंतन करना चाहिए। दूसरों पर अधिकार करने की भावना से अहिंसा का अतिक्रमण होता है।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

27. आचार्येणापि कर्त्तव्या व्यवस्था समयोचिता।
संघर्षो ह्यधिकारस्य तेन नोज्जृंभितो भवेत्।।

नेतृत्वस्य अर्हता

28. स्वानुशासनवैशिष्ट्यं व्यवस्थाकौशलं तथा।
साहसं च सहिष्णुत्वं सहगामित्वदक्षता।।
29. परेषां सम्मतिं श्रोतुं युक्ता वृत्तिरनाग्रहः।
विधायको दृष्टिकोणः नेतृत्वस्यार्हता मता।।
(युग्मम्)

गणपतये शिक्षाः

30. विचारे व्यवहारे वा येषां नैवानुकूलता।
तेऽपि नैवावमन्तव्या संघनिष्ठां यदि श्रिताः।।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

27. आचार्य को भी समयोचित—जिस समय जो अपेक्षित हो, वैसी व्यवस्था करनी चाहिए, जिससे अधिकार का संघर्ष जम्हाई न ले, बढ़ न सके।

नेतृत्व की अर्हता

28–29. नेतृत्व की अर्हता—

1. विशिष्ट आत्मानुशासन।
2. व्यवस्था का कौशल।
3. साहस।
4. सहिष्णुता—अनुकूल–प्रतिकूल व्यक्ति और परिस्थिति, दोनों को सहन करने की शक्ति।
5. सबको साथ में लेकर चलने की दक्षता।
6. दूसरों की सम्मति को सुनने के लिए समुचित वृत्ति।
7. अनाग्रह।
8. विधायक दृष्टिकोण।

गणपति के लिए शिक्षा

30. जिन साधु–साध्वियों की आचार्य के प्रति विचार और व्यवहार में अनुकूलता नहीं होती, यदि उनमें संघनिष्ठा है तो आचार्य का कर्तव्य है कि उनकी अवमानना न होने दे।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

31. क्वचिद् मुनेरवस्थायां मतिभेदोऽपि संभवेत्।
आचार्यस्यासने स्थित्वा नेतव्यो नाम विस्मृतिम्।।

32. योग्यता यादृशी यस्य तं तथैव नियोजयेत्।
पूर्वावस्थाकृतो भेदस्तत्र नो बाधको भवेत्।।

33. अनेन व्यवहारेण विकासो शासने भवेत्।
योग्यताया उपेक्षा तु रुणद्धि प्रगतिं ध्रुवम्।।

34. गणस्य प्रोन्नतौ दत्तचित्तो यः स्याद् निरन्तरम्।
तस्योन्नतिर्विधातव्या गणिना गणवृद्धये।।

35. जयाचार्येण संदृब्धा शिक्षा गणपतेः कृते।
उपहारो महानेषः शिरोमणिरिवोत्तमः।।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

31. मुनि अवस्था में किसी दूसरे मुनि के साथ कहीं भी, कभी भी विचार भेद, मतभेद भी हो सकता है। आचार्य के आसन पर स्थित होने के बाद पुराने सारे मतभेदों को भूल जाना चाहिए, विस्मृति के गर्त में डाल देना चाहिए।

32. जिस साधु या साध्वी की जैसी योग्यता हो, उसे उसकी योग्यता के अनुरूप कार्य में नियोजित करे। मुनि अवस्था के समय होने वाला मतभेद अथवा व्यवहार-भेद उसके नियोजन में बाधक न हो।

33. इस प्रकार के व्यवहार से धर्मसंघ में विकास होता है। योग्यता की उपेक्षा, योग्य व्यक्ति की उपेक्षा निश्चित ही प्रगति में अवरोध पैदा करती है।

34. जो साधु अथवा साध्वी संघ की उन्नति में निरन्तर दत्तचित्त रहता है, आचार्य को चाहिए—उसे आगे बढ़ाए। यह गणवृद्धि का प्रमुख हेतु बनता है। जो गण के लिए समर्पित है, उसको बढ़ाना गण की वृद्धि करना है।

35. जयाचार्य ने गणपति के लिए जो शिक्षा गीत लिखा है, वह आचार्य के लिए महान् उपहार है। उसे उत्तम शिरोमणि (चूड़ामणि) अलंकरण की तरह शिरोधार्य करना चाहिए।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

प्रमादस्य शोधनम्

36. प्रमादो यस्य कस्यापि गच्छतो जायते ध्रुवम् ।
नोपेक्षा तस्य कर्त्तव्या शुद्धिं नेयः स सत्वरम् ।।

37. वीतरागं न मन्येत साधुः स्वं साधयन्नपि ।
अपूर्णः पूर्णतामानी भ्रांतिमासेवतेतराम् ।।

38. गुरूणां सविधे सर्वैः प्राप्तव्यं मार्गदर्शनम् ।
लब्धमार्गो मुनिर्लक्ष्यं सम्यक् साधयितुं क्षमः ।।

39. शुद्धा नीतिः कामधेनुः प्रशस्ता
दोग्धुं विद्वान् वेत्ति यो नीतिनिष्ठः ।
तस्यावश्यं कामना सिद्धिमेति
नीतिर्मूल्यं यत्र संघे स संघः ।।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

प्रमाद का शोधन

36. कार्य करते हुए जिस किसी साधु/साध्वी से प्रमाद हो सकता है। उसकी उपेक्षा नहीं करनी चाहिए। शीघ्र ही उसके प्रमाद की शुद्धि करनी चाहिए। उसे जागरूक बना देना चाहिए।

37. अपनी साधना करता हुआ साधु स्वयं को वीतराग न माने। जो अपूर्ण होते हुए भी अपने आपको पूर्ण मान लेता है, वह भ्रांति को पाल रहा है।

38. सभी साधु–साध्वियों को गुरु से मार्गदर्शन लेना चाहिए। जिसने मार्ग प्राप्त कर लिया है, ऐसा मुनि लक्ष्य को सम्यक् प्रकार से सिद्ध करने में सफल होता है।

39. शुद्ध नीति प्रशस्त कामधेनु है। जो नीतिनिष्ठ विद्वान् इसका दोहन करना जानता है, उसकी कामना निश्चित ही पूर्ण होती है। जहां नीति स्वयं मूल्य है, वह संघ वास्तव में संघ है।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

चतुर्थः अध्यायः

शिक्षापदम्

महाव्रतस्य प्रशिक्षा

1. अस्माकं द्विविधा शिक्षा ग्रहणाऽऽसेवनात्मिका।
प्रथमा स्मृतिसंबद्धाऽभ्यासरूपा परा मता।।

2. यदा कश्चिद् भवेद् दीक्षा–दीक्षितो विरताशयः।
तदा स शिक्षणीयोऽस्ति निर्दिष्टेन पथामुना।।

3. महाव्रतानि पञ्चापि सम्यग् बोध्यानि यत्नतः।
प्रयोगा अपि निर्देश्याः त्रिसप्ताहमयं क्रमः।।

4. सूत्रतश्चार्थतो ग्राह्याः भावनाः पञ्चविंशतिः।
अभ्यासः सप्तसप्ताहं तासां निर्देशितो भवेत्।।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

अध्याय 4

शिक्षा–पद

महाव्रत का प्रशिक्षण

1. हमारे लिए शिक्षा के दो प्रकार बतलाए गए हैं—1. ग्रहण शिक्षा 2. आसेवन शिक्षा। ग्रहण शिक्षा का संबंध स्मृति के साथ है और आसेवन शिक्षा का संबंध अभ्यास के साथ।

2. जब कोई व्यक्ति इन्द्रिय विषयों से विरत होकर मुनि दीक्षा से दीक्षित होता है, तब उसे दीक्षा के प्रारंभ से ही निम्न निर्दिष्ट मार्ग से प्रशिक्षण दिया जाए।

3. पांचों महाव्रतों को अच्छी तरह प्रयत्नपूर्वक नवदीक्षितों को समझाना चाहिए। उन्हें महाव्रतों के प्रयोगों का निर्देश देना चाहिए। यह तीन सप्ताह का क्रम है।

4. उन्हें पच्चीस भावनाओं की सूत्र और अर्थ दोनों दृष्टियों से जानकारी कराई जाए। भावनाओं के अभ्यास के लिए सात सप्ताह का क्रम निर्देशित होना चाहिए।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

गुणात्मक-शक्तिः

5. अनुप्रेक्षाप्रयोगेण धर्मद्वारचतुष्टयी।
साधनीया सुशिष्येण साधुत्वं सुस्थिरं ततः।।

6. कश्चिन् मंत्रजपायार्हः कश्चिद् ध्यानार्हतां गतः।
निर्णयं विधिवत् कृत्वा यथार्हं स्यान्नियोजितः।।

7. अनुप्रेक्षा जपस्तद्वत् भावनेति गुणत्रयी।
अनिवार्या मता तज्ज्ञैः नेतुं चित्तं शुभाशयम्।।

आत्मार्थी भव

8. खेतसीस्वामिना प्रोक्तं स्वर्गे यूयं गमिष्यथ।
आचार्यभिक्षुणा प्रोक्तं नाहं स्वर्गं तु कामये।।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

गुणात्मक शक्ति

5. धर्म के चार द्वार हैं—क्षमा, मुक्ति, आर्जव और मार्दव। एक अच्छा शिष्य अनुप्रेक्षा के प्रयोग के द्वारा इनकी साधना करे। इससे साधु जीवन में स्थिरता आ जाती है—क्षमा, मुक्ति, आर्जव और मार्दव—ये पुष्ट होते हैं।

6. किसी में मंत्रजप की अर्हता होती है, किसी में ध्यान की अर्हता होती है। पहले हर व्यक्ति की योग्यता का विधिवत् निर्णय किया जाए, फिर योग्यता के अनुरूप उसे नियोजित किया जाए।

7. अनुप्रेक्षा, जप और भावना—ये तीन गुणात्मक शक्तियां हैं। चित्त को पवित्र आशय वाला बनाने के लिए इनकी साधना अनिवार्य है—ऐसा साधना के मर्मविदों ने बतलाया है।

आत्मार्थी बनो

8. आचार्य भिक्षु का स्वास्थ्य कमजोर हो रहा था, उस समय खेतसीस्वामी ने कहा—अब आप स्वर्ग में जायेंगे। आचार्य भिक्षु बोले—मुझे स्वर्ग की कोई अभिलाषा नहीं है।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

9. सुखं पौद्‌गलिकं नो नो वाञ्छामि मनसाप्यहम्।
त्वयापि वाञ्छनीयं नो समतामभिवांछता।।

10. प्रार्थनीयो न च स्वर्गः आत्मार्थी भव केवलम्।
खेतसीस्वामिना लब्धं शिक्षामृतमिदं गुरोः।।

विनयः

11. विनयः शासने मूलं विकासः फलमिष्यते।
मूले रूढे स्वयं शाखा–प्रशाखा–विस्तरो भवेत्।।

अहिंसा संयमश्च

12. अहिंसा भगवता प्रोक्तं सर्वभूतेषु संयमः।
कायस्य मनसो वाचो हिंसा भवत्यसंयमः।।

13. ईर्यासमितियोगेन यस्यात्मा भावितो भवेत्।
अहिंसा कायिकी तस्य प्रवृत्तौ सिद्धिमश्नुते।।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

9. स्वर्ग के सुख पौद्गलिक हैं। मैं मन से भी उनकी इच्छा नहीं करता। तुम्हें भी उनकी इच्छा नहीं करनी चाहिए। तुम भी समता की आकांक्षा करो, पौद्गलिक सुखों की नहीं।

10. तुम स्वर्ग की कामना मत करो। केवल आत्मार्थी बनो। खेतसीजी स्वामी को गुरु का शिक्षामृत उपलब्ध हो गया।

विनय

11. जैन शासन के कल्पवृक्ष का मूल है विनय। विकास उसका फल है। मूल के स्थिर होने पर शाखाओं और प्रशाखाओं का स्वतः विस्तार हो जाता है।

अहिंसा और संयम

12. भगवान ने कहा—सब प्राणियों के प्रति संयम करना अहिंसा है। शरीर, मन और वचन का असंयम हिंसा है।

13. ईर्या समिति के योग से जिसकी आत्मा भावित होती है, उसकी प्रवृत्ति में शारीरिक अहिंसा सिद्ध हो जाती है।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

14. मनःसमितियोगेन यस्यात्मा भावितो भवेत्।
अहिंसा मानसी तस्य सिद्धा भवति सर्वदा।।

15. वचःसमितियोगेन यस्यात्मा भावितो भवेत्।
अहिंसा वाचिकी तस्य सिद्धा भवति सर्वदा।।

16. अनिष्टं चिन्तनं हिंसा हिंसा च कटुभाषणम्।
विधेरतिक्रमो हिंसा ध्येयमेतत् पुनः पुनः।।

निर्जरायाः उपक्रमः

17. निर्जरा करणीयाऽस्ति लक्ष्यं निर्धारितं भवेत्।
आत्मशुद्धेरुपायोऽस्ति शुद्ध्या धीः शुद्ध्यति ध्रुवम्।

18. निर्जरा महती यत्र, तत्र साधोर्गतिर्भवेत्।
निर्जरार्थी सदानन्दः प्रशस्तो मुनिसत्तमः।।

19. निर्जरार्थं मुनिश्रेष्ठैः उपवासो विधीयते।
ततोप्यतितरां सास्ति क्षमाधर्मेऽनुशीलिते।।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

14. मन समिति के योग से जिसकी आत्मा भावित होती है, उसके मानसिक अहिंसा सदैव सिद्ध होती है।

15. वचन समिति के योग से जिसकी आत्मा भावित होती है, उसके वाचिक अहिंसा सदैव सिद्ध होती है।

16. अनिष्ट चिन्तन हिंसा है और कटुभाषण भी हिंसा है। विधि का अतिक्रमण करना भी हिंसा है। इस विषय का पुनः पुनः चिन्तन करना चाहिए।

निर्जरा का उपक्रम

17. मुझे निर्जरा करनी है—यह लक्ष्य निर्धारित होना चाहिए। यह आत्मशुद्धि का उपाय है। आत्मा की शुद्धि होने पर निश्चित ही बुद्धि विशुद्ध बन जाती है।

18. जिस प्रवृत्ति से महान् निर्जरा होती है, उस दिशा में साधु को गतिशील होना चाहिए। निर्जरार्थी मुनि सदानन्द—निरंतर आनन्द का अनुभव करता है। वह मुनि श्लाघनीय और साधना के क्षेत्र में कीर्तिमान स्थापित करने वाला होता है।

19. उत्तम मुनि निर्जरा के लिए उपवास करता है। क्षमा धर्म का अनुशीलन करने पर उससे भी अधिक निर्जरा होती है।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

20. उपवासे सुकष्टेऽपि यादृशी रुचिरुत्तमा।
क्षमायां तादृशी नास्ति चित्रं ! किमत्र कारणम्।।

21. उपवासे सुकष्टेपि यादृशी रुचिरुत्तमा।
ध्याने न तादृशी दृष्टा चित्रं ! किमत्र कारणम्।।

असंग्रहस्य भावना

22. मूर्च्छा पदार्थजातेषु, समाधेर्भंगकारणम्।
अनुप्रेक्षाप्रयोगेण, विनेतव्या सुसाधुभिः।।

23. संग्रहः कुरुते मूर्च्छां मूर्च्छा करोति संग्रहम्।
यो मूर्च्छां न नयेद् हानिं, स्यात् कथं सोऽपरिग्रहः ?

24. विहितो वस्त्रमानस्य, मर्यादाया अतिक्रमः।
आचार्यभिक्षुणा तस्य, प्रतिकारः तदा कृतः।।

ज्ञानमाचारश्च

25. ज्ञानस्य सारमाचारः एतद् ध्येयं मुहुर्मुहुः।
अस्य पुष्टिकरं वाक्यमाम्नाये स्फुटमुच्यते—

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

20. उपवास करने में काफी कष्ट होता है। फिर भी उसमें जैसी रुचि है, वैसी रुचि क्षमा के अनुशीलन में नहीं है। आश्चर्य ! इसका कारण क्या है?

21. उपवास करने में काफी कष्ट होता है। फिर भी उसमें जैसी रुचि है, वैसी रुचि ध्यान करने में नहीं है। आश्चर्य ! इसका कारण क्या है?

असंग्रह की भावना

22. पदार्थ–समूह में जो मूर्च्छा होती है, वह समाधि–भंग का कारण है। विवेकशील मुनि अनुप्रेक्षा के प्रयोग द्वारा इसे दूर करे।

23. संग्रह मूर्च्छा बढ़ाता है और मूर्च्छा संग्रह को बढ़ाती है। जो मूर्च्छा को कम नहीं करता, वह अपरिग्रही कैसे हो सकता है?

24. कुछ साध्वियों ने मर्यादा से अधिक वस्त्र रख लिए। आचार्य भिक्षु ने उसका प्रतिकार किया—उन्हें संघ से पृथक् कर दिया।

ज्ञान और आचार

25. ज्ञान का सार आचार है—इसका बार–बार चिन्तन करना चाहिए। इसकी पुष्टि करने वाला श्रीमद् जयाचार्य का वाक्य तेरापंथ की परम्परा में स्पष्ट रूप से प्रचलित है—

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

26. ‘आचारशून्यज्ञानस्य ‘नवले’ रुप्यमेककम्।
तेनाचारे मतिर्धेया निपुणं मुनिसत्तमैः।।’

27. ‘श्रुतज्ञानं विशिष्टं नो चारित्रे कुशला मतिः।
तस्यास्ति नवनवतिः ‘नवले’ रुप्यकाणि च।।’

28. केवलं पुस्तकारूढ़ं ज्ञानं नार्हति पूर्णताम्।
अभ्यासः प्रवरस्तस्य कर्तव्यो मुनिपुंगवैः।।

राग-द्वेषयोः विलयः

29. निमित्ताभावतः सर्वे शांता भवंति मानवाः।
आवेशस्य निमित्तेऽपि शांतिरभ्यस्यतां यतैः।।

30. निमित्तानि स्वयोगेन वृद्धिं नैवाप्नुयुः क्वचित्।
आगतानि विवेकेन दूरं नेयानि सत्वरम्।।

31. नियंत्रणस्य सामर्थ्यं वर्धतामिति सोद्यमम्।
संकल्पः प्रत्यहं कार्यः, रहस्यं प्रगतेरिदम्।।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

26. आचार-शून्य ज्ञान का मूल्य नौली में एक रुपये के समान है। इसलिए उत्तम मुनि आचार में अपनी सूक्ष्म बुद्धि का उपयोग करे।

27. जिसका श्रुतज्ञान विशिष्ट नहीं है, किन्तु चारित्र में बौद्धिक कौशल का उपयोग करता है, उसकी नौली में 99 रुपये हैं। तात्पर्य की भाषा में ज्ञान एक रुपये के समान और चारित्र 99 रुपये के समान है।

28. केवल पुस्तकारूढ़ ज्ञान पूर्ण नहीं होता। इसलिए श्रेयोमति से सम्पन्न मुनि के लिए जरूरी है कि वह ज्ञान के साथ-साथ चारित्रिक विकास का अभ्यास करे।

राग-द्वेष का विलय

29. निमित्त न मिलने पर सभी मनुष्य शांत-उपशांत रहते हैं। किन्तु आवेश का निमित्त मिलने पर भी संयत मुनि को शांति का अभ्यास करना चाहिए।

30. अपने योग से निमित्त वृद्धिंगत न हों, शक्तिशाली न हों। जो निमित्त रास्ते के बीच आएं, उन्हें विवेकपूर्वक हटा दें।

31. मेरी नियंत्रण की सामर्थ्य बढ़े—प्रतिदिन उद्यमपूर्वक इस प्रकार का संकल्प करना चाहिए। यह प्रगति का रहस्य है।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

32. आवेगो बलवानस्ति निरुद्धो नापराध्यति।
अनिरुद्धः स साफल्यं रुणद्धि नात्र संशयः।।

33. रागद्वेषौ विलीनौ स्तः शिक्षा सा सम्मता बुधैः।
रागद्वेषापनोदाय यतितव्यं महात्मभिः।।

34. स्वभावपरिवर्ताय ध्यानाभ्यासो महौषधम्।
वासरे वा रजन्यां वा ध्यानमालम्ब्यतां ध्रुवम्।।

संकल्पजा सिद्धि :

35. संकल्पः सुस्थिरो यस्य तस्य किंचिन्न दुष्करम्।
ऐकाग्र्येण स सिद्धः स्यात् अभ्यासस्तस्य सिद्धये।।

36. चारित्राराधना मूलं, साधनाशतशाखिनः।
समभावो ध्रुवं साध्यः ध्रुवयोगो महानसौ।।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

32. आवेग बलवान होता है। अगर उसका निरोध कर दिया जाए तो वह हानि नहीं पहुंचा सकता। यदि उसका निरोध नहीं किया जाए तो वह सफलता में बाधा पहुंचाता है। इसमें कोई संदेह नहीं है।

33. प्रबुद्ध व्यक्ति उस शिक्षा को महत्त्व देते हैं, जिससे राग–द्वेष विलीन हो सके, उपशान्त हो सके। महान् व्यक्तियों को राग–द्वेष का विलय करने के लिए प्रयत्न करना चाहिए।

34. स्वभाव–परिवर्तन के लिए ध्यान का अभ्यास बहुत बड़ी औषध है। दिन में अथवा रात्रि में ध्यान का आलम्बन अवश्य लेना चाहिए।

संकल्प से सिद्धि

35. जिसका संकल्प सुस्थिर होता है, कभी डांवाडोल नहीं होता, उसके लिए कुछ भी दुष्कर नहीं है। एकाग्रता से वह सिद्ध होता है। उसकी सिद्धि के लिए जरूरी है अभ्यास।

36. चारित्र की आराधना साधना के शतशाखी वृक्ष का मूल है। इसलिए समभाव——समता अथवा सामायिक की अवश्य साधना करनी चाहिए। यह महान् ध्रुवयोग है।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

37. साधना सिद्धिमाप्नोति, संकल्पो बलवान् यदि।
निश्चयः सुदृढ़ो नूनं, लक्ष्यं नयति साधकम्।।

38. संयमे चरणौ न्यस्तौ, तस्मिन्नेव गतिर्भवेत्।
विकल्पो नेतरः कश्चिद्, आजीवनमुपाश्रयेत्।।

भावशुद्धि :

39. क्षायोपशमिका भावाः स्थैर्यं यान्ति यथा यथा।
तथा तथा प्रवर्धन्ते, चेतसोऽपि विशुद्धयः।।

40. भावा औदयिका एते, न्यूनतामाप्नुयुर्यथा।
तथा प्रवृत्तिरादेया, विकासायात्मशांतये।।

41. भावशुद्धौ यतो विद्वान्, वस्तुतः शांतिमृच्छति।
नोपेक्षा करणीयात्र, समाधिसिद्धिहेतवे।।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

37. यदि संकल्प शक्तिशाली होता है तो साधना सिद्धि को प्राप्त होती है। सुदृढ़ निश्चय साधक को लक्ष्य तक पहुंचा देता है, यह सुनिश्चित तथ्य है।

38. संयम में चरणन्यास किया है तो उसमें ही गति होनी चाहिए। जीवन–पर्यन्त उसके अतिरिक्त दूसरा विकल्प नहीं आना चाहिए।

भाव–शुद्धि

39. जैसे–जैसे क्षायोपशमिक भाव स्थिरता को प्राप्त होते हैं, वैसे–वैसे ही चित्त की विशुद्धि बढ़ती है।

40. ये औदयिक भाव जिस प्रवृत्ति से कम हों, विकास और आत्मशांति के लिए वैसी प्रवृत्ति आदेय है, करणीय है।

41. विद्वान पुरुष भावशुद्धि होने पर वास्तविक शांति का अनुभव करता है। अतः समाधि की सिद्धि के लिए भावशुद्धि की उपेक्षा नहीं करनी चाहिए।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

पञ्चमः अध्यायः

साधनापदम्

मनोबलस्य हेतवः

1. बहिस्तनानि द्रव्याणि भित्त्वा चान्तर्दृशा स्वयम्।
जीवनं पश्यतो नित्यं मनोबलं प्रवर्धते।।

2. मन्दं मन्दं श्वसन् योऽस्ति सोहमित्यात्तभावनः।
परात्मानुभवस्तस्य मनोबलं प्रवर्धते।।

3. यस्मिन् प्रवर्तते कायः चित्तं तत्रैव वर्तते।
शरीरचेतसोरैक्ये मनोबलं प्रवर्धते।।

4. शिथिलीकरणं साधु जागरूकत्वसंयुतम्।
नित्यमभ्यस्यतो नूनं मनोबलं प्रवर्धते।।

5. आहारे वर्जयन् नित्यमपोषण–कुपोषणे।
शरीरं वाहयेत् तस्य मनोबलं प्रवर्धते।।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

अध्याय 5

साधना–पद

मनोबल के हेतु

1. बाह्य द्रव्यों के सघन आवरण को हटाकर जो व्यक्ति अंतर्दृष्टि से अपने जीवन को देखता है, उसका मनोबल बढता है।

2. जो मंद–मंद श्वास लेता है, जो परम है, वह मैं हूं––इस भावना से भावित रहता है, जो परमात्मा का अनुभव करता है, उस व्यक्ति का मनोबल बढ़ता है।

3. जिस विषय में शरीर की प्रवृत्ति होती है, उसी विषय में चित्त का वर्तन होता है। शरीर और चित्त की एकरूपता होने पर मनोबल बढ़ता है।

4. कायोत्सर्ग के दो अङ्ग हैं––सम्यक् शिथिलीकरण और जागरूकता। जो व्यक्ति इस प्रकार के कायोत्सर्ग का सतत अभ्यास करता है, उसका मनोबल निश्चित बढ़ता है।

5. जो व्यक्ति आहार में अपोषण और कुपोषण दोनों का नित्य वर्जन करता हुआ शरीर का निर्वाह करता है, उस व्यक्ति का मनोबल बढ़ता है।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

6. संयतं चापि निद्राति जागर्त्ति चापि संयतम् ।
सततं यतमानस्य मनोबलं प्रवर्धते ।।

7. एकत्वानुभवो दीर्घं एकान्ते वासमिच्छतः ।
अव्यस्तानुभवस्तस्य मनोबलं प्रवर्धते ।।

8. शब्दादिविषये तावद् इन्द्रियाणामगोचरे ।
चित्तं प्रवर्तते तस्य मनोबलं प्रवर्धते ।।

9. ऊर्जाकेन्द्रे कृतध्यानः सूर्यातपं च सेवते ।
प्राणशक्तेः प्रकर्षेण मनोबलं प्रवर्धते ।।

10. नियत्यां पुरुषार्थेऽपि चिन्तने चाप्यचिन्तने ।
विश्वासो वर्तते तस्य मनोबलं प्रवर्धते ।।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

6. जो संयमपूर्वक नींद लेता है, संयमपूर्वक जागृत रहता है, इस प्रकार सतत प्रयत्नशील रहने वाले व्यक्ति का मनोबल बढ़ता है।

7. जो दीर्घकाल तक एकत्व का अनुभव करता है, जो एकान्त में रहना चाहता है, जो मैं बहुत व्यस्त हूं—ऐसा अनुभव नहीं करता, उस व्यक्ति का मनोबल बढ़ता है।

8. इन्द्रियों के शब्द आदि विषय जिसके लिए अगोचर–अविषय बन जाते हैं, इस प्रकार प्रतिसंलीनता अथवा प्रत्याहार में जिसका चित्त प्रवृत्त रहता है, उसका मनोबल बढ़ता है।

9. जो तैजस केन्द्र पर ध्यान करता है, सूर्य का आतप लेता है—विधिपूर्वक आतापना का प्रयोग करता है। इस विधि से प्राण–शक्ति का प्रकर्ष होता है और मनोबल बढ़ता है।

10. जिस व्यक्ति का नियति और पुरुषार्थ में, चिन्तन और अचिन्तन में विश्वास होता है, उसका मनोबल बढ़ता है।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

स्पृहा दुःखञ्च

11. स्पृहा दुःखं समं जन्म यातोऽसौ निश्चिता मतिः।
निस्पृहत्वं सुखं नाम तथैव समजन्मनी।।

12. यावती स्यात् स्पृहा तावद् दुर्बलं मानसं भवेत्।
निस्पृहत्वं भवेद् यावत् तावद् मानसिकं बलम्।।

13. दुर्बलं मानसं नूनं सुप्तं निसर्गतो भवेत्।
सुप्ते मनसि सर्वेषां तमसः संचयो महान्।।

दायित्वस्य बोधः

14. स लोको नाम जागर्ति दायित्वं वेत्ति यो ध्रुवम्।
पुंसो दायित्वहीनस्य समं रात्रिर्दिवा भवेत्।।

15. कर्तव्यं यश्च जानाति जानाति परिवर्तितुम्।
अन्यान् सम्मानयेत् सम्यक् व्यवहारो लघून् प्रति।।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

स्पृहा और दुःख

11. स्पृहा और दुःख एक साथ जन्म लेते हैं, यह निश्चित मत है। इसी प्रकार निस्पृहता और सुख भी एक साथ जनमते हैं।

12. जितनी स्पृहा होती है, उतना ही मन कमजोर होता है। जितनी निस्पृहता होती है उतना ही मानसिक बल बढ़ता है।

13. सोया हुआ मन स्वभावतः कमजोर होता है। सुप्त मन की अवस्था में सबमें अंधकार घना हो जाता है।

दायित्व का बोध

14. जो अपने दायित्व को जानता है, वह व्यक्ति जागृत है। दायित्वहीन पुरुष के लिए दिन-रात समान होते हैं—न कोई दिन की सार्थकता और न कोई रात की।

15. जो कर्तव्य को जानता है, बदलने का उपाय जानता है और जो दूसरों को सम्मान देना जानता है, जिसका छोटों के प्रति सम्यक् व्यवहार होता है—

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

16\. परीषहजये साधोः साधुत्वं प्रगुणीभवेत्।
तेन प्रशांतचित्तेन सोढव्याः स्युः परीषहाः।।
(युग्मम्)

समिति-गुप्ति-साधना

17\. समितिः साधिता सम्यक् व्यवहारे फलप्रदा।
गुप्त्याधारेण संपुष्टा, पुष्णाति चापि निश्चयम्।।

18\. मनोगुप्तस्य दुःखानि, न्यूनानि स्युर्निसर्गतः।
चञ्चलं हि मनो दुःखं, स्वल्पं बहु करोत्यलम्।।

19\. वाग्गुप्तः कलहान् मुक्तः मान्यो भवति सर्वदा।
कायगुप्तः सदा शांतः आरोग्यं तस्य वर्धते।।

20\. मुनयो हेमराजाद्याः, कायोत्सर्गपरायणाः।
लब्धवन्तः सहिष्णुत्वाद् दुर्लभां सिद्धिमुत्तमाम्।।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

16. जो साधु परीषह को जीतने में सफल होता है, उसका साधुत्व और अधिक दीप्तिमान हो जाता है। इसलिए वह प्रशांतचित्त से परीषहों को सहन करे।

समिति और गुप्ति की साधना

17. समिति की सम्यक् प्रकार से की गई साधना व्यवहार में फलप्रद होती है। वह गुप्ति से संपुष्ट होकर निश्चय नय को पुष्ट करती है, साधक को आत्मानुभूति की दिशा में ले जाती है।

18. जो व्यक्ति मनोगुप्ति की साधना कर गुप्त हो जाता है, सहज ही उसके दुःख कम हो जाते हैं। चञ्चल मन स्वल्प दुःख को भी बहुत बड़ा बना देता है।

19. जो वचनगुप्ति से गुप्त है, वह कलह से मुक्त होता है। वह व्यक्ति सर्वदा मान्य होता है। जो कायगुप्ति से गुप्त है, वह सदा शांत रहता है। उसका आरोग्य बढ़ जाता है।

20. मुनि हेमराजजी आदि साधु लम्बे समय तक कायोत्सर्ग का अभ्यास करते थे। इससे उनकी सहिष्णुता बढ़ गई। इस सहिष्णुता के कारण उन्हें उत्तम सिद्धि उपलब्ध हुई, जो हर किसी के लिए दुर्लभ है।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

21. शीतकाले निशीथिन्यां उत्तरीयं विना स्थिराः ।
प्रहरं यावदश्रान्ताः शीतं सोढुं समादृताः ।।

कषायस्य उपशमः

22. अहिंसाधर्ममासाद्य क्षांतिर्यस्य वरीयसी ।
स नूनं कुरुते संघं सुस्थिरं चिरजीविनम् ।।

23. कषायोपशमः साध्यः उपशांतः सदा सुखी ।
स एवायतिसौभाग्यो नूनं चित्तसमाधिभाक् ।।

24. अनुशासननिष्ठायां क्व स्यात् कलहभावना ?
कलहो जायते तत्र यत्र नास्त्यनुशासनम् ।।

25. तारतम्यं कषायस्य प्रतिव्यक्ति प्रविद्यते ।
तथाप्युपशमस्तस्य जायतेऽभ्यासयोगतः ।।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

21. शीतकाल की रात्रि में उत्तरीय को उतारकर खड़े-खड़े स्थिर रहकर एक प्रहर तक कायोत्सर्ग करते। इस अवस्था में वे खिन्न नहीं होते। सर्दी को सहने के लिए वे समादृत हो गए थे—उनके मन में सहिष्णुता की निष्ठा पैदा हो गई थी।

कषाय का उपशय

22. जिसने अहिंसा धर्म को स्वीकार किया है और जिसकी क्षमा अथवा सहिष्णुता प्रवर है, वह साधु संघ को सुस्थिर और चिरजीवी बनाता है, यह असंदिग्ध है।

23. मुनि का साध्य है कषाय का उपशमन करना। उपशांत व्यक्ति हमेशा सुखी होता है। वही व्यक्ति भविष्य में सौभाग्यशाली होता है, चित्तसमाधि को प्राप्त करता है, यह ध्रुव सत्य है।

24. जहां अनुशासन की निष्ठा है, वहां कलह कहां से होगा? कलह वहां होता है, जहां अनुशासन नहीं है।

25. व्यक्ति-व्यक्ति में कषाय की तरतमता होती है। किसी में आवेश कम होता है, किसी में ज्यादा। फिर भी अभ्यास के द्वारा उसका उपशम किया जा सकता है।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

26. कषायस्य निरोधेन संवरो नाम सिद्ध्यति।
संवृतात्मा हि दुःखानां अंतं प्रकुरुते स्फुटम्।।

27. अनुप्रेक्षाप्रयोगेण कषायो निर्जरां व्रजेत्।
निर्जरार्थी कषायस्य तीव्रतां मन्दतां नयेत्।।

28. अनुप्रेक्षाफलं स्पष्टं वर्णितं विद्यते महत्।
उत्तराध्ययने सूत्रे पठनीयं मुमुक्षुभिः।।

आगमाऽध्ययनम्

29. प्रत्यक्षज्ञानिनः प्रायो दुर्लभाः सन्ति सम्प्रति।
आगमस्तेन मंतव्यः पथदर्शनहेतवे।।

30. आधारो जिनवाण्या मे श्रीभिक्षुस्वामिनोदितम्।
तस्या अध्ययने तेन वर्धतां रुचिरुत्तमा।।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

26. कषाय के निरोध से संवर सिद्ध होता है। संवृतात्मा मुनि ही दुःख का अंत करता है, यह स्पष्ट है।

27. अनुप्रेक्षा के प्रयोग से कषाय की निर्जरा होती है, उसका रेचन हो जाता है। जो निर्जरार्थी है, आत्मा का शोधन करना चाहता है, वह तीव्र कषाय को मंद कर देता है।

28. उत्तराध्ययन सूत्र में अनुप्रेक्षा के फल का स्पष्ट वर्णन किया गया है। मुमुक्षु को उसे बार-बार पढ़ना चाहिए।

आगम का अध्ययन

29. वर्तमान में प्रत्यक्षज्ञानी प्रायः दुर्लभ हैं। अतः पथदर्शन के लिए आगम की वाणी को मान्य करना चाहिए, उसे बहुमान देना चाहिए।

30. भिक्षु स्वामी ने कहा——मुझे जिनवाणी का आधार है। इसलिए आगम-अध्ययन के प्रति हमारा प्रबल आकर्षण पर्याप्त मात्रा में बढ़ना चाहिए।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

सामञ्जस्यं सौहार्दञ्च

31\. सामञ्जस्यं च सौहार्दं वृद्धिं नेयं परस्परम्।
गणस्य प्रोन्नतिस्तेन सहजा जायते शुभा।।

रत्नत्रयस्य आराधना

32\. स्वाध्यायं कुरुते कश्चित् ध्यानमभ्यस्यति ध्रुवम्।
तथापि कलहे वृत्तिः किं ध्यानस्य फलं तदा।।

33\. आचारे प्रबला निष्ठा मर्यादायां विधौ तथा।
विनये प्रवणा वृत्तिः तदा ध्यानं फलान्वितम्।।

34\. ज्ञानस्याराधना पुण्या साधना फलवत्यसौ।
तेन प्रतिदिनं कार्यः स्वाध्यायो मुनिभिर्यतैः।।

35\. दर्शनाराधना पुण्या साधना महती भवेत्।
साधर्मिकेण वात्सल्यं स्थिरीकरणहेतवे।।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

सामञ्जस्य और सौहार्द

31. परस्पर सामञ्जस्य और सौहार्द को बढ़ाएं। इससे सहज ही गण की कल्याणकारी उन्नति होती है।

रत्नत्रय की आराधना

32. कोई व्यक्ति स्वाध्याय करता है, कोई ध्यान का अभ्यास करता है। फिर भी कलह की वृत्ति बनी रहती है तो ध्यान का क्या फल हुआ?

33. आचार, मर्यादा और विधि–विधान में प्रबल निष्ठा होती है, विनय में कुशल वृत्ति होती है, तब ध्यान फल देता है।

34. ज्ञान की पवित्र आराधना फल देने वाली साधना है। इसलिए मुनि को जागरूकतापूर्वक प्रतिदिन स्वाध्याय करना चाहिए।

35. दर्शन की पवित्र आराधना एक बहुत बड़ी साधना है। साधर्मिकों का स्थिरीकरण करने के लिए उनके प्रति वात्सल्यपूर्ण व्यवहार करना दर्शन की आराधना है।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

कल्याणकारकम्

1. कृपाप्रसादस्तुलसीगुरूणाम्
नियोजितो भैक्षववाङ्मयेहम्।
आचार्यभिक्षोस्तपसा प्रपूताऽ
न्तर्दृष्टिरुत्तानशया मयाप्ता।।

2. श्रीमज्जयाचार्यकृतां समीक्षां
वीक्ष्य प्रणीता खलु भिक्षुगीता।
संघस्य वृद्ध्यै सुहिताय पुण्या
दृष्टिं विधाताऽभ्युदयाय विश्वे।।

3. प्रवरे गंगाशहरे, मर्यादाया महोत्सवे।
पूर्वं विनिर्मिता पूर्णा, शक्तिपीठस्य सन्निधौ।।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

कल्याणकारक

1. यह गुरुदेव श्री तुलसी की कृपा का प्रसाद है कि उन्होंने मुझे भिक्षु वाङ्मय के अध्ययन में नियोजित किया। आचार्य भिक्षु की तपस्या से पवित्र बनी हुई प्रत्यक्षदृष्टि–अन्तर्दृष्टि मैंने प्राप्त की।

2. तेरापंथ के चतुर्थ आचार्य श्रीमद् जयाचार्य द्वारा की गई समीक्षा को देखकर मैंने भिक्षु–गीता की रचना की। यह पुण्य भिक्षु–गीता संघ के लिए वृद्धिकारिणी और हितकारिणी तथा विश्व को अभ्युदय की दृष्टि देने वाली होगी।

3. प्रवर गंगाशहर, मर्यादा–महोत्सव का अवसर और गुरुदेव की शक्तिपीठ का सान्निध्य। कुछ पहले प्रणीत भिक्षु–गीता आज शक्तिपीठ की साक्षी से सम्पन्न हो रही है।

© Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org